[Conference- Innovation in Music & Dance :January,2015] ISSN- 2350-0530(O) 2394-3629(P)
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v3.i1SE.2015.3445

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

संगीत में नवाचार का इतिहास

डॉ. वसुंधरा पवार
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
महारानी लक्ष्मीबाई शास .स्नात.महा.वि. किला भवन इंदौर(म.प्र.)

भारतीय संगीत का इतिहास उतना ही प्राचीन और अनादि हैं, जितनी मानव जाति। इसका सभारंच वैदिक माना जाता है। जितनी प्राचीन हमारे देश की सभ्यता और संस्कृति है उतना ही विस्तृत एवं विषाल यहाँ के संगीत का अतीत है।
भारतीय संगीत का उद्भव सामदेव की ऋचाओं से हुआ है तथा इसका शैषव काल ऋषि मुनियों की तपोभूमि तथा यज्ञवेदियों के पावन घ्रुम के सान्निध्य में सुवासित होकर व्यतीत हुआ। यही कारण है कि भारतीय मनीषियों ने नाद को ईश्वर के समान कहा गया है, तथा नाद ब्रह्म की सदैव उपासना की है।

" न नादेन बिना गीतं न नादेन बिना स्वरः।
न नृत्तं तस्मान्नादात्मकं जगत्।। "

न तो नाद के बिना गीत है, न नाद के बिना स्वर है, न नाद के बिना नृत्य है, यह समस्त जगत् ही नादात्मक है।
नादजनित आनंद का कोई अंत नही है। सृष्टि का आधारभूत तत्व नाद है। जो कि 'ऊँ' कार वाचक है। 'संगीत दर्पण' के रचयिता 'दामोदर पंडित' ने नाद की व्याख्या करते हुए लिखा है–

" नादेन व्यंज्यते वर्णः पदं वर्णात् पदाद्य।
व्वसो व्यवहारोडचं नादाधीनमतों जगत्।। "

नाद के योग से वर्णो की उत्पत्ति होती है, और वर्ण से शब्दों की सिध्दी होती है शब्दों से भाषा की उत्पत्ति, और शषा के होने से ही सब व्यवहार चलते है। यद्यपि भारतीय संगीत के उद्गम के विषय में विभिन्न दृष्टि कोण है। अधि संख्य विद्वान किसी न किसी रूप में धार्मिक मान्यताओं से संगीत को जोड़ने का प्रयत्न करते है। भगवती सरस्वती को विद्या और कला की देवी कहा गया। सरस्वती के हाथों मे वीणा का होना संगीत का प्रतीक है। इसी प्रकार कृष्ण की बंशी, भगवान विष्णु का शंख तथा भगवान शंकर का डमरू संगीत के प्रतीक है।कहा जाता है कि डमरू से सभी स्वरों तथा वाद्य के बोलों की सृष्टि हुई है।
भारतीय संगीत सर्वदा से धर्मानुकूल रहा है। हिंदु सदैव साधना के माध्यम से ईश्वर प्राप्ति का प्रयास करते रहे हैं। साधना मार्ग का प्रथम माध्यम संगीत ही है। संगीत की महानता का हमारे धर्म ग्रंथों में विशिष्ट रूप से उल्लेख किया गया है।

' जप कोटि गुणं ध्यानं ध्यानं कोटि गुणो लयः।
लय कोटि गुणं गानं गातात् परतरं नहि।।'

वस्तुतः ऐसी उच्चतम प्रशंसा अन्य किसी विषय की नहीं की गई है। पुराणों मे कहा गया है कि विश्व सृष्टि से पूर्व अंतरिक्ष का समग्र वायुमंडल एक आश्चर्यजनक ध्वनि से गुंजायमान था। सृष्टि कर्ता बह्मा, रक्षा कर्ता विष्णु, संहार कर्ता महादेव, इन सभी शक्तियों का क्रमशः अभ्युदय हुआ इन सभी शक्तियों ने मिलकर समग्र बह्माण्ड की रचना की। ये सभी शक्तियॉ अत्यंत संगीत प्रेमी थे। रामायण, महाभारत, हरिवंश और अन्य पुराणों जैसे मार्कण्डेय पुराण, वायुपुराण, विष्णु पुराण आदि में भी संगीत का विस्तृत वर्णन मिलता है। भरत मुनि के नाट्य शास्त्र में भी नृत्य, गीत, वाद्य का अलग–अलग उल्लेख मिलता है। संगीत शब्द का कहीं प्रयोग नहीं हुआ है। कई विद्वानो का अभिमत है कि संगीत शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम नारद ने ही किया है।
जैन काल में वीणा का प्रचार प्रगति पर था। वीणा के द्वारा धार्मिक सिद्धांतो का प्रचार किया जाता था, बौद्ध काल में शास्त्रीय संगीत का प्रचार जैन काल से भी अधिक हुआ। '**मतस्य जातक**' में मेघगीति को और 'गुप्तिल जातक' में गंधर्व गुप्तिल कुमार को सप्ततंत्री वीणा वादन में कुशल बताया गया है।

महाकाव्य काल में संगीत का अपना विशेष स्थान था। रामायण काल में लव–कुश को संगीत की शिक्षा दी जाती थी। रावण और मंदोदरी भी संगीतज्ञ थे। दुंदधि, भेरी, घट, डिमडिम आदि वाद्य उच्चकोटि के यंत्रो का प्रचार रामायण काल में था।

महाभारत काल में संगीत का रूप वैदिक कालीन संगीत से कुछ परिवर्तित हो चला था। इस काल में धर्म और संगीत अधिक समीप आते जा रहे थे। 'रामलीला' का निर्माण भी इसी काल मे हो गया था। इस युग में कृष्ण के अतिरिक्त अर्जुन भी महान

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

संगीतज्ञ थे उन्होने अज्ञात वास के समय अपना नाम वृहन्नला रख कर राजा विराट की पुत्री उत्तरा का संगीत की शिक्षा दी थी।

मौर्य काल तथा उसके पश्चात् शिल्पियों ने स्तूपों की वेष्टीनियों पर बौद्ध प्रतीकों की पूजा के जो दृश्य अंकित किये है, उनमें उस काल के गीत नृत्यों के वृन्दों और वाद्यों का बहुत सुंदर अंकन किया है। उनके द्वारा हमें न केवल उन वृंदो के रूप का दर्शन होता है, अपितु उनके वाद्य किस प्रकार के तथा कैसे थे, इसका भी परिज्ञान होता है। जातकों में वीणा के बहुत उल्लेख आते हैं।

वाद्यों में वीणा अनेक प्रकार की ओर विकसित बनने लगी थी। वीणा का तूंबा दोणी कहलाता था। वीणा का दंड मुड़ा हुआ अर्थात् वक्र होता था। उसमें सात तार होते थे। अतः वह सप्ततंत्री कहलाती थी। वीणा के तार आजकल जैसे धातु से निर्मित नहीं होते थे।बहुत प्राचीन काल में दाम या मूंज का प्रयोग होता था। आगे चलकर रेशम की डोरियाँ, बाल इत्यादि भी काम में लाए जाने लगे।

पाणिनी ने जिस दुर्दुर नामक वाद्य का उल्लेख किया है, वह मृदंग ही है उसे वाद्य मांड माना गया है। मृदंग की उत्पत्ति प्रारंभ में टूटे हुए मांड या बरतन पर चमड़ा मढ़ लेने से हुई होगी। जिसका विकसित और अलंकृत रूप मौर्यकालीन अर्थ चित्र में मिलता है।

गुप्त काल में संगीत की उन्नति में समुद्र गुप्त का विशेष योगदान रहा। समुद्र गुप्त स्वयं उच्च कोटि का वीणा वादक था। इसी काल में कालिदास के नाटक मालविका अग्निमत्र में शिव के नृत्य का वर्णन है। मालविका मृदंग या सूरज के साथ नृत्य व गायन करती थी।

11 वीं या 15 शताब्दी में हिंदुस्तान पर मुसलमानों की विजय में संगीत के इतिहास का एक महत्व पूर्ण काल प्रारंभ होता है। अलाउद्दीन के दरबार में 'अमीर खुसरों' का नाम एक फारसी कवि एवं संगीतज्ञ के रूप में उल्लेखनीय है। जिसने अपना संपूर्ण जीवन संगीत को अर्पण कर दिया। अमीर खुसरो ने संगीत की अनेक शैलियों का अविष्कार किया। ध्रुपद तथा ख्याल के जन्म दाता खुसरों ही थे। इसके अतिरिक्त उन्होने एमान, साजगिरी, झीलफ, शहाना तथा सुहा आदि रागों का भी अविष्कार किया। भारतीय वीणा तथा तंबूरे के मेल से उन्होने सितार को जन्म दिया। इसी प्रकार मृदंग से उन्होने तबले का अविष्कार किया। उन्होने 'गोपाल नायक' के गायन को सुनकर 'कव्वाली' तथा 'तराना' नामक शैली को जन्म दिया।

मुगल काल में हमे भारतीय संगीत के दो रूप साथ–साथ विकसित होते हुए मिलतें है। एक ओर चैतन्य महाप्रभु अपने सांगीतिक कीर्तनों के द्वारा भारत की जनता को संगीत की ओर आकर्षित कर रहे थे, तो दूसरी ओर कव्वाली के द्वारा संगीत का एक नवीन प्रकार मुखरित हो रहा था।

इस काल में अनेक संगीत रत्न पैदा हुए जिन्होने अनेक प्रकार से संगीत की सेवा की। ग्वालियर में संगीत का प्रारंभ राजा मानसिहं तोमर के समय से होता है। उन्ही के शासन काल में नायक बख्शू थे, जिनका सुमधुर संगीत में तानसेन के बाद अपना अलग महत्व था।

राजा मानसिंह के समय मे ही बैजू ने अपने अद्भूत संगीत से मानसिंह और मृगनयनी को बड़ा प्रभावित किया। मृगनयनी ने बैजू से संगीत शिक्षा ग्रहण की। भारतीय संगीत में बैजु का कार्य स्तुत्य है। वह राजा मानसिंह के काल का चमकता रत्न है। उन्होने अनेक लोकप्रिय गीत व ध्रुपद लिखे। बैजू वीणा वादन में अत्यंत प्रवीण थे।

संगीत में नयें प्रयोग :– बोल पट से पूर्व मूक चित्रों में संगीत की तृप्ति के लिए गायकों को परदे के पीछे बैठाकर गीत गवाए जाते थे। किंतु 4 मई 1931 को भारत का सर्वप्रथम बोलता चित्र 'आलम–आरा' दिखाया गया, इस चित्र में केवल तीन गीत थे और इसका संगीत साधारण स्तर का था। उसमें आज के संगीत की भॉति वाद्य यंत्रों की भरमार नही थी, उस समय हारमोनियम, तबला और क्लैरीओनेट तीन वाद्य ही यथेष्ट समझे गए। साथ ही फिल्म संगीत का क्षेत्र केवल गजल, ठुमरी तक ही सीमित था।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

किंतु पूर्व भारत में कलकत्ता सर्वप्रथम अंग्रेजों के संपर्क में आने के कारण वहाँ पर अंग्रेजी संगीत का प्रचार हुआ, और सर्वप्रथम भारतीय चित्रों में वृंदवादन का प्रयोग किया गया। इस प्रकार 'आर्केस्ट्रा' का प्रथम प्रयोग 'पूरन भक्त' चित्र में किया गया। इसकी सुंदरता को देखकर उस समय के अनेक संगीतकार पंकज मलिक, तिमिर बरन, कमलादास गुप्ता, रॉबिन चटर्जी ने भी अपने संगीत में ऑर्केस्ट्रा का प्रयोग शुरू किया। जब बंबई के संगीत निर्देषकों ने बंगाली फिल्म संगीत की इस प्रगति को देखा तो अनिल विश्वास, और सरस्वती देवी ने 'सरल संगीत' नाम से एक नई संगीत पद्धति को जन्म दिया। फलस्वरूप 'चल–चल रे नौजवन' (बंधन) 'न जाने किधर आज नाव चली रे' (झूला) 'एक नया संसार बसा ले' (किस्मत) आदि मधुर गीतों का निर्माण हुआ।

इसी समय लाहौर में 'खजांची' नामक चित्र का संगीत 'गुलाम हैदर' ने दिया। उन्होने पंजाबी संगीत के साथ ढोलक का प्रयोग फिल्म संगीत में किया, जो आज संगीत की जान है। पंजाबी संगीत की लोक प्रियता को देखकर 'खेमचंद प्रकाश' नामक संगीतकार ने फिल्मों में राजस्थानी मारवाड़ी संगीत का प्रयोग प्रांरभ किया।

इसके उपरांत नौषाद ने बांसुरी, क्लैरीओनेट, सितार, मेंडोलिन का संयुक्त प्रयोग किया गया। और अकार्डियन, बीन को संगीत क्षेत्र में लाए। सी. रामचंद्र की धुनों में कभी–कभी मराठी लोक गीतों की झलक दिखाई देती है। और उन्होने ही 'शहनाई चित्र' द्वारा विदेशी संगीत का भारतीय फिल्म संगीत में प्रयोग किया। इस चित्र के गीत 'आना मेरी जान संडे के संडे' ने बड़ी लोकप्रियता प्राप्त की, और परिणाम स्वरूप विदेशी संगीत का प्रयोग भारतीय चित्रों में दिन–प्रतिदिन बढ़ता चला गया। इस पाश्चात्य संगीत का सबसे अधिक प्रयोग ओ.पी.नैयर ने किया।

इसी तरह 1955 में 'झनक–झनक पायल बाजे' में शिव कुमार शर्मा द्वारा पार्श्व संगीत के लिए संतूर का प्रयोग किया। आज शास्त्रीय और फिल्म संगीत मे संतूर वाद्य एक महत्वपूर्ण स्थान बना चुका है।

वर्तमान में फ्यूजन म्यूजिक के साथ ही संगीत में नवीन वाद्यों का चलन भी बढ़ा है। संगीत में नवाचार निरंतर चलता आ रहा है और नये–नये संगीतकार इसका उपयोग वर्तमान में करते आ रहे है।

अनुश्रुतियों और अर्द्धचित्रों से संगीत और नृत्य के जिस वातावरण का दर्शन होता है, वह संगीत, नृत्य, अभिनय आज अत्यंत विकसित अवस्था को प्राप्त कर चूका है।

संदर्भ –

1. *शर्मा, भगवत शरण – भारतीय संगीत का इतिहास*
2. *मिश्रा डॉ. अरूण – भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत*
3. *गर्ग लक्ष्मीनारायण – संगीत निबंधावली*
4. *परांजये डॉ. शरच्चंद्रश्रीधर – संगीत बोध*
5. *सचदेव डॉ. रेणु – धार्मिक परंपराऍं एवं हिन्दुस्तानी संगीत*
6. *श्रीपद बंधोपाध्याय – संगीत रहस्य*
7. *द्विवेदी, हरिहर निवास – मध्य भारत का इतिहास खंड 1*
8. *शर्मा, अमल दाष – विश्व संगीत का इतिहास*